RESEARCH COMMUNICATIONS
(An International Open Access, Peer Reviewed, Multidisciplinary Online Journal)
https://research-communications.cmpcollege.ac.in/
ISSN: Under Process
Vol.: 1, Issue: 1, January-June 2023, pp. 6-13

उर्दू अदब के नए सरोकार

डॉ० जैबुन्निसा सईद

एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, उर्दू विभाग
सी. एम. पी. डिग्री कॉलेज, इलाहबाद विश्वविद्यालय
प्रयागराज ,उत्तर प्रदेश
ई-मेल :drz.nisa1959@gmail.com

सारांश

हम आज दुनिया में जिन हालात को बदलते हुये देख रहे हैं हर तरफ़ इन्तिशार, बेचैनी, फ़िरक़ा-वारियत, आदम बेज़ारी, बेसुकूनी, ग़रज़ दुनिया मुसलसल तब्दील होती जा रही है। ये तब्दीली सियासी, तहज़बी, मुआशी और इमरानी सतहों पर वक़ू पज़ीर हो रही है। हमारी मुआशरती और समाजी ज़िन्दगी में साइंस की नई नई ईजादात और नई टेक्नालाजी दाखिल होती जा रही हैं लेकिन ख़ारिजी ज़िन्दगी के सारे उसूल व क़वाइद इन्सान की बातिनी ज़िन्दगी में एक ऐसा इन्तिशार पैदा कर रहे हैं कि वह दिन रात नए नए चैलेंजेज़ का सामना कर रहा है। अदब इन हालात-ए-ना गुफ़्ता में अपना क्या किरदार अदा कर रहा है इस पर ग़ौर करने की अशद ज़रूरत है। हमें इन रवैय्यों से नबर्द-आज़मा होने के लिए अपनी फ़िक्री तरजीहात पर अज़-सर-ए-नौ ग़ौर करने की ज़रूरत है। अदब इन्सानी जज़्बों, इन्सानी रवैय्यों, इन्सानी जिबिल्लतों और इन्सानी ज़रूरियात को अपने इज़हार का ज़रिया बनाता है और वही अदब मुअस्सिर होता है जो हमारे इर्द-गिर्द इन्तिशार, ब्रह्मी और अद्म-तवाज़ुन की सही निशान-दही करता है। प्रस्तुत लेख में उर्दू अदब के नए सरोकारों पर विस्तृत चर्चा की गयी है।

मुख्य शब्द: उर्दू अदब, नए रवैय्ये, समाजी, रिवायत, तख्लीक़ी, तसव्वुरात, रूजहानात, अस्नाफ़,तन्क़ीद।

प्रस्तावना

उर्दू अदब में किसी भी नए रवैय्ये की बाबत गुफ़्तुगू से पहले इस बात पर ग़ौर व ख़ौज़ करना लाज़मी है कि अदब में नए रवैय्ये की आमद और उसके पसमंज़र की आमद में चले जाने का वक़्फ़ा क्या होता है। दर अस्ल जिसे हम अदबी रवैय्या कहते हैं वह किसी बंधे टके उसूल पर कारबंद होने के बजाय तशकील व तामीर, तग़ैय्युर व तबद्दुल के साथ नमू पज़ीर(1) होता है। रवैय्यों के तहत मुख़्तलिफ़-उन-नौ मज़ाहिर सामने आते हैं जिनसे हम यह समझने की सई करते हैं कि ज़माना-ए-गुज़श्ता(2) से ज़माना-ए-हाल के रवैय्यों में क्या फ़र्क़ नुमायाँ है। उर्दू अदब में यूँ तो पुराने रवैय्ये कभी ख़त्म नहीं होते बल्कि उनकी शक्ल बदल जाती है। उर्दू अदब में कई अस्नाफ़ हैं जिन पर तबा आज़माई की जाती रही है और लोग बाग दिलचस्पी से लिखते रहे हैं मसलन् अफ़साना, नावेल, ग़ज़ल,

नज़्म और शायरी की दूसरी असनाफ़। तन्क़ीद भी अदब की एक ठोस सिन्फ़ है। इन अस्नाफ़ पर गुफ्तुगू से पहले मैं चाहती हूँ कि रवैय्ये के तअल्लुक़ से कुछ बात की जाए।

उर्दू अदबी मैलानात

अदबी रवैय्यों का तअल्लुक़ अदबी मैलानात(3) और तख़्लीक़ी रूजहानात से होता है। जहाँ तक अदबी मैलानात और तख़्लीक़ी रूजहानात के जन्म, नश्व-ओ-नुमा, उरूज और फ़िर ज़वाल का तअल्लुक़ है तो ये सब एक ख़ास अहद के सियासी, समाजी, अख़्लाक़ी, तहज़ीबी और इक़्तसादी अवामिल से वाबस्ता होता है। अस्री तक़ाज़े एक ख़ास मुद्दत तक कारफ़रमायी के बाद मुआशरा में एक ख़ास नौइय्यत(4) की सूरते-हाल पैदा कर देते हैं जिनके नतीजे में उस अहद के अहले क़लम के पास दो तरीक़े रह जाते हैं, एक मुफ़ाहमत का और दूसरा रद्दे अमल का। अगर हम चाहें तो इस मुफ़ाहमत और रद्दे अमल के तजज़ियाती मुताला की रौशनी में अस्री आगही, तरजे एहसास और मुतग़ैय्यर रूजहानात व मैलानात की सूरत-ए-हाल का मुताला करके हुसूल-ए-नताएज के लिये दुरूस्त तनाज़ुर पैदा कर सकते हैं। मुफ़ाहमत और रद्दे अमल, अमल और बेअमली, मुस्बत(5) और मनफ़ी,(6) रिवायत और बग़ावत, मुसल्लमात और तजरिबात ये सब चन्द इस्तिलाहात हैं मगर दर हक़ीक़त उस बुनियादी आवेजश की मज़हर हैं जो अस्री तक़ाज़ों और अहल-ए-क़लम के तख्लीक़ी(7) शुऊर में जारी रहती हैं। अगर क़लमकार में तख्लीक़ी विज़न कमज़ोर होगी, तर्ज़-ए-एहसास में तवानाई न होगी और सबसे बढ़कर उसमें जुरअत न होगी जो एक सच्चे फ़न्कार के लिए ख़ालिस साबित होती है तो फिर वह ज़माना के हाथों बेबस हो जायेगा और यूँ महज़ वक़्त के गुम्बद में सदाए बाज़गश्त(8) बनकर रह जायेगा। लेकिन जब उसके पास तवाना तख़्लीक़ी विज़न, शिद्दत से पुर तर्ज़-ए-एहसास और हक़गोई और बेबाकी की ज़िन्दा तस्वीर भी हो तो फिर वह अपने ज़माने और मुआशरे से आजिज़ नहीं आयेगा बल्कि तख़्लीक़ के इस्म आज़म से उन सब पर हावी होगा। यहाँ क़लमकार का अपने अस्र या मुआशरे पर हावी होना इन मानों में कि वह अपने मुआशरे के दाख़िली तज़ादात को उजागर करता है, मुनाफ़क़त(9) के पर्दे चाक करता है। ग़रज़ वह हर काम कर गुज़रता है जिसकी बिना पर मुआशरा अपने अख़्लाक़ी, समाजी, मज़हबी और इन्सानी मक़ासिद(10) से दूर होने के बावजूद भी उनसे क़ुरबत और यगानगत के दावे करता है।

अदब दुनिया के सच के इज़हार का एक अहम-तरीन वसीला(12) है और हमारे अदीबों, शायरों और नक़्क़ादों का रवैय्या किस हद तक इससे मुन्सलिक है, यह क़ाबिल-ए-ग़ौर अम्र है। हमारे रवैय्यांे में कितनी तब्दीलियाँ आयीं, हमारे सोचने के तरीक़ों ने किस क़दर अपने सही रास्तों को इख़्तियार किया। हमने नज़रियाती जकड़बन्दियों के ख़िलाफ़ कितनी आवाज़ें उठायीं और तख़्लीक़ी आज़ादी पर कितना इसरार किया। बेज़ार-कुन तसव्वुरात के ख़िलाफ़ कितना लिखा और पस-मांदा(13) ख़्यालात व फ़िक्रियात की कितनी मज़म्मत(14) की क्या यह सच नहीं कि हम एक मस्नूई दानिश-वराना फ़िज़ा में साँसें ले रहे हैं जिसका समाजी सूरत-ए-हाल और मुआशरती अहवाल से वास्ता तो है लेकिन तसन्नो-आमेज़ आवाज़ें बुलंद तो होती हैं लेकिन गुम्बद में गूँजती हुई। क्या ऐसे हालात में हमें अपने मज़हब, सक़ाफ़त, जुग़राफिये, सियासी, समाजी, इक़्ितसादी हालात में तब्दीली लाने की ज़रूरत है और क्या यह अदब का फ़रीज़ा नहीं बनता कि हम जिस अहद में साँस ले रहे हैं उस अहद की खरी सदाक़तों और

खोटे फ़रेबों को अपना ज़रिया बनायें। हमने बेदार ज़हनी का सुबूत न दिया तो फिर अदब का किरदार क्या रह जायेगा? हमें यह जान लेना चाहिए कि अदबी अस्नाफ़ बहस व मुबाहसा से कम अपनी तख़्लीक़ी तवानाई, तख़्लीक़ियत परवरी से ज़्यादा ज़िन्दा रहती है। हमें अपनी तख़्लीक़ी सलाहियतों को ब-रू-ए-कार लाना है।

आज अदब जिस बे-राह-रवी का शिकार है उसके दाख़िली और ख़ारिजी उमूर आप पर यक़ीनन आशकार हुए होंगे। हमें माज़ी की तरफ़ लौटना नहीं है लेकिन यह भी नहीं भूलना चाहिए कि हमने माज़ी से जो कुछ कशीद किया हैै अपना अदब उससे अगला क़दम क्यों न हो।

अदब में नज़रियाती या फ़िक्री मबाहिस या इख़्तिलाफ़ से तसव्वुरात व ख़्यालात, फ़िक्रियात व नज़रियात के लिए नए नए उफ़ुक़ खुलते हैं। इनसे न सिर्फ़ अदब और उससे वाबस्ता रूमूज़ व निकात की नई मंज़िलों का सुराग़ मिलता है बल्कि नई हक़ीक़तें भी रोज़-ए-रौशन की तरह अयाँ होती हैं। लेकिन वह तअस्सुबात और जानिब-दाराना तरीक़ा-ए-कार जो ज़ात के तारीक गोशों में जन्म लेते हैं और अपनी सस्ती शोहरत और ख़ुदनुमायी की हिर्स व हवस में सिर्फ़ पगड़ी उछालने और दूसरों को कमतरीन साबित करने के मुज़ाहिरे को तुर्रा-ए-इम्तियाज़ समझते हैं, निहायत ही क़ाबिल-ए-मज़म्मत अमल है। हमारे यहाँ एक दूसरे पर सबक़त ले जाने की होड़ ने ऐसा धमाल मचा रखा है कि न पूछिए। वह बेहतर है वह कमतर है की गर्दान से अदब का कोई फ़ायदा न होगा। बस इतना जानना चाहिए कि **जो ज़र्रा जहाँ है वह अपनी जगह आफ़ताब न सही एक टुकड़ा धूप का तो है**। सच तो यह है कि हमारे यहाँ तक़लीद, अख़्ज़ और तवारूद ज़्यादा है। भोंडापन अदब में एक ग़ैर-संजीदा अमल है और इसका ही चलन आजकल आम है, कहीं ऐसा तो नहीं कि हम अपने अदब और तारीख़ से बेख़बरी में जी रहे हैं। हमारे मुताले का दायरा सिमट कर रह गया है या बिल्कुल मौक़ूफ़ हो गया है। कम पढ़े को हम ज़्यादा समझने लगे हैं और कम लिखने को अहम। अदब को जीने का हमारा यह तर्ज़ अन्दाज़ कहीं हमें क़अर-ए-गुमनामी में तो गुम न कर देगा। अदब बरा-ए-ज़िन्दगी, अदब बरा-ए-अदब या अदब बरा-ए-फ़न के राग अलापने का ज़माना नहीं रहा। अदब, फ़र्द, समाज, हुकूमत और आलमी बिरादरी सब एक सतह पर आ गये हैं। कोई भी एक दूसरे के बग़ैर नहीं जी सकता। ज़िन्दगी के यही अतवार व मिन्हाज हमें अदब तख़्लीक़ करने और अदब में कोई नया कारनामा सर-अन्जाम देने पर उकसाते हैं। हम जिस ग्लोबल अहद में जी रहे हैं वहाँ अब सब कुछ जग-ज़ाहिर है। हमारी नज़रों से कुछ भी मख़्फ़ी(15) नहीं है। ऐसे हालात में तो अदब तख़्लीक़ करना एक पेचीदा अमल नहीं रह गया लेकिन जब तक हमारी फ़िक्रियात की जड़ें मज़बूत न होंगी, हमारी सोच के दायरों में उसअत न होगी, हमारे तसव्वुरात में गहराई व गीराई न होगी तो हम संजीदा अदब तख़्लीक़ करने के क़ाबिल न रहेंगे। मौजूदात-ए-आलम में कोई शै या वाक़िया ऐसा नहीं जिसका अदब से ब-राह-ए-रास्त या बिल-वास्ता तअल्लुक़ न हो। ऐसा पहले भी था लेकिन इतनी आसानियों और सहूलतों के साथ नहीं जितनी आज हमें मुयस्सर हैं। रत्ब व याबिस तो हर जगह है लेकिन इसकी मिक़दार का तअय्युन भी तो शर्त है। हमें अब ज़माने की रफ़्तार के मुताबिक़ अदब तख़्लीक़ करने की सलाहियत पैदा करनी होगी। अदब का मक़सद क्या रह गया है इसके मुतअल्लिक़ ग़ौर व फ़िक्र करना होगा। हम पिछली सदियों से मुख़्तलिफ़ ज़िन्दगी गुज़ार रहे हैं इसलिए अब हमारा इक्तिशाफ़-ए-फ़न फ़र्ज-ए-मन्सबी बन गया है।

नए अदबी रवैय्यों के तनाज़ुर में सबसे पहले उर्दू अफ़साना की बात करें तो हम यह कह सकते हैं कि नई सदी के बीस बरस गुज़र जाने के बाद भी इन दो अश्रों में उर्दू अफ़सानों में अस्री-आगही के बदलते हुए ज़ावियों की झलक देखी जा सकती है। एक लम्हा को अगर रूजहानात, मैलानात और तहरीक और उनके मक़ासिद को फ़रामोश(16) करके अपने नए पुराने लिखने वालों की फ़हरिस्त पर नज़र डालें तो बिला-शुब्हा कहा जा सकता है कि हर नाम बल्कि हर अफ़साना निगार अपनी मुद्दत में अस्री शुऊर, इन्सान की अक्कासी और ज़िन्दगी की तरजुमानी के लिहाज़ से अपनी अलग अलग दुनिया बसाये हुए मिलेगा। ज़माना की पहचान, अपने मुआशरे की शनाख़्त और अस्नाफ़ की परख के लिए वह अपने अहद के तनाज़ुर में अफ़साना की तख़्लीक़ करता हुआ नज़र आ रहा है। आज उर्दू अफ़साना जिस ख़ुसूसियत की बिना पर अपने अस्र से बुलन्द होकर दूसरे अस्र में जा पहुँचा है वह कहानी की मुकम्मल मुराजअत है। अगर कहानी वाक़िआत और किरदारों की तवानाई से भरपूर हो तो वह ज़रूर ज़िन्दा रहती है। आज अफ़साना में हक़ीक़त निगारी की ख़ारिजियत पर भी ज़ोर दिया जा रहा है कि इन्सान का बातिन, इन्सानी साइकी का भी लैंड स्कैप होता है जो ख़ारिजी माहौल से किसी तौर से भी कम दिलचस्प और गैर-अहम नहीं होता। इक़बाल मजीद जो पिछली सदी में लिख रहे थे चन्द बरसों पहले उनमें नुमायाँ तब्दीली नज़र आयी। अब तो वह मरहूम हो चुके लेकिन अफ़सानवी अदब को वह जितना दे गये वह कम नहीं। रतन सिंह एक लम्बी उम्र पाकर अब फ़ौत हुए लेकिन उनका फ़न्काराना अन्दाज़ हमेशा तग़ैय्युर व तबद्दुल के अमल से गुज़रता रहा। सैय्यद मुहम्मद अशरफ़ ने अपनी लैक तब्दील कर ली। ग़ज़न्फ़र, तारिक़ छतारी, सलाम बिन रज़्ज़ाक़, शमोएल अहमद, जावेद सिद्दीक़ी, बेग एहसास (इनको मरहूम लिखते कलेजा मुँह को आता है) सिद्दीक़ आलम, ख़ालिद जावेद और कई नाम ऐसे हैं जिन्होंने पन्द्रह-बीस बरसों में क़ौमी और बैन-अल-अक़वामी मसाइल की तरफ़ ज़्यादा तवज्जो दी और एक नए रंग व आहंग के साथ अफ़साना की बुनत-कारी की। हम यूँ कह सकते हैं कि तरक़्क़ी पसन्द अदब, जदीदियत और माबाद जदीदियत के सौ साल से ज़्यादा के सफ़र में उर्दू अफ़साना ने एक नई मंज़िल तलाश की और बंधे टके उसूलों से इन्हिराफ़ करते हुए एक ऐसी डगर का इन्तिख़ाब किया जहाँ उर्दू अफ़साना क़ारी की दिलचस्पी का ऐसा सामान बन गया जो नई सियासी, समाजी, तहज़ीबी अक़दार की पेशकश में आगे आगे रहा। नए आलमी मसाइल का इज़्ाहारिया, तहज़ीबी व सक़ाफ़ती मज़ाहिर का बयान, मौज़ूआती, उसलूबियाती और फ़िक्रियाती सतह पर तब्दीलियाँ इन सब चीज़ों ने उर्दू अफ़साने को एक क़ाबिल-ए-ऐतिमाद मेयार की सफ़ में ला खड़ा किया। यहाँ ख़्वातीन अफ़साना निगारों ने भी इज्तिहादी रवैय्या इख़्तियार किया जिनमें ज़किया मशहदी और तरन्नुम रियाज़ (अफ़सोस तरन्नुम रियाज़ का भी इन्तिक़ाल हो गया) के नाम अहम हैं और भी कई नाम हैं जिनके अफ़सानों में रिवायती उसलूब ज़ीस्त की बुनियादें तब्दील हो चुकी हैं और सिक्का-बंद तरीक़ा-हा-ए-तर्ज़-ए-तहरीर से बग़ावत के आसार साफ़ दिखाई देते हैं।

गुज़श्ता बीस बरसों में उर्दू नावेल की झड़ी लग गयी। हर अफ़साना निगार इस सिन्फ़ पर तबा-आज़मायी करने लगा। अफ़सानों में नाम कमाने के बाद इस सम्त मुराजअत फ़ाले नेक भी साबित हुआ। ख़्वातीन अफ़साना निगार भी उनसे पीछे नहीं रहीं। इन नावेलों को समझने और उनकी तौसी-ए-इशाअत के लिए कच्चे पक्के मज़ामीन का अम्बार भी लग गया। लेकिन सच तो यह है कि चन्द ही

नावेल ऐसे हैं जिन को ऐसे नावेल क़रार दे सकते हैं जिनमें वुसअत-ए-बयान और फ़िक्री-आगही की तलाश में मुरव्वजा(17) फ़न्नी साँचों और सिक्का-बन्द मेयार व अक़दार से इन्हिराफ़ की शक्लें दिखाई देती हैं। अब नावेल में नित नई हैअतों की जुस्तुजू और नए से नए पैराया-ए-इज़्हार नज़र आने लगे। अब नावेल वसी-तर और अमीक़-तर मुआशरती, तारीख़ी, सवानिहि और तहज़ीबी पसमंज़र में लिखा जाने लगा। गो-कि यह अमल पहले भी गिनती के अहम नावेल निगारों के यहाँ मिलता है लेकिन आज के नावेल का तेवर और उसका अन्दाज़-ए-नज़र अपने पेश-रौ-ओं से बिल्कुल मुख़्तलिफ़(18) है। आज के नावेल के मुताले से यह साफ़ अयाँ होता है कि नया अदबी और तहज़ीबी रवैय्या सामने आया है, सोच और फ़िक्र के ज़ाविये बदले हैं, ज़िन्दगी को समझने और परखने के तौर तरीक़ो में बुनियादी तब्दीली आयी है। हुसैन-उल-हक़ हों या अनीस अशफ़ाक़, सिद्दीक़ आलम हों या ख़ालिद जावेद, सैय्यद मोहम्मद अशरफ़ हों या शमोएल अहमद सभों ने नावेल के अहद-ए-रफ़्ता के घिसे पिटे और ज़वाल-याफ़्ता पैटर्न से हटकर नावेल लिखने की कोशिश की है। इनके यहाँ माज़ी की बाज़याफ़्त के साथ रूहे अस्र मौजूद है। फ़न्नी हक़ीक़त निगारी के साथ इन्सानी तसव्वुरात की तमाम होनी-अनहोनी कायनात अपने उरूज पर है। इन सभों का रिश्ता इज्तिमाई तहज़ीब और उसके सरचश्मों से इतना पुख़्ता है जैसे ज़िन्दा, धड़कती, खुद-शनास और खुदा-शनाश ज़िन्दगी एक नामालूम सफ़र पर गामज़न(19) है। ऐसा लगता है ये लोग शाह वली उल्ला की ज़बान में कह रहे हों मैं भी अपने वक़्त में क़ैद हूँ और अपनी वारदात का असीर हूँ।

जहाँ तक उर्दू शायरी में नए रवैय्यों की तश्कील व तामीर की बात है तो ग़ज़ल और नज़्म दो ऐसी अस्नाफ़ हैं जिनमें हर शायर को ज़्यादा से ज़्यादा दिलचस्पी रहती है। शायरी एक रौशनी है और इस रौशनी को घर मुहय्या करना शायर का काम है। इसी रौशनी में शायर का एहसास, उसका जज़्बा और उस जज़्बे की मौसीक़ी और तस्वीर में ढालने की कूवत कार-फ़रमा होती है लेकिन ख़्याल और एहसास की वहदत इस एहसास को जगमगाती है। ख़्याल और एहसास का तअल्लुक़ अपने अहद की हिस्सियत से भी होता है। गुज़श्ता चन्द बरसों में ग़ज़ल और नज़्म के हवाले से जो शायर सामने आये हैं उनके यहाँ तख़्लीक़ी तवानाई के साथ साथ तख़्लीक़ी ताज़गी भी है। इसमें कोई शक नहीं कि फ्राइड के नज़रियात, माकर्स के नज़रिया, करकेगार या सारतर के नज़रियात अपने अहद के साथ धुंदले तो ज़रूर पड़े लेकिन शायरी आज भी इनसे अपना दामन पूरे तौर पर न छुड़ा सकी लेकिन इन सब के बावजूद शायरी में एक इज्तिहादी र रवैय्या ज़रूर आया वह मौजूआती एतिबार से, फ़िक्रियाती लिहाज़ से और ज़बान व बयान की तब्दीलियों के साथ आज की शायरी का डिक्शन(20) कल की शायरी से मुख़्तलिफ़ है। रिवायत की पासदारी आज भी क़ायम है लेकिन इस रिवायत को नई शक्ल में पेश करने का हुनर भी सामने आया है। शायरी के मज़ामीन के इन्तिख़ाब एक ऐसे नए रवैय्येे को अपनाया गया है जो फ़िल-हक़ीक़त बीस बरसों पहले नहीं था। ग़ज़लिया शायरी में कई नाम ऐसे हैं जो इसकी मेयार बन्दी में अहम रोल अदा कर रहे हैं। यह सच है कि हर अहद(21) का शायर अपने ज़माने का सबसे बड़ा गवाह होता है अपने अहद से नबर्द-आज़मा भी होता है इन्सानियत को ही नहीं मज़ाहिर-ए-कायनात को भी हैरत-ज़दा आँखों से देखता है। मुआशरती-हक़ाएक़ से वह आँखें नहीं चुरा सकता। आज की शायरी उस मुसाफ़िर की हिकायत-ए-खूँ-चकाँ है जो जंग भी करता है और मातम

भी। आज का शायर ना मालूम के नए गोशे इन्सानियत पर खोल देता है। आज का नया अदबी रवैया हर शायर के लिए ना मालूम से मालूम की तरफ़ एक अहम सफ़र है। सिर्फ़ फ़र्द का नहीं बल्कि उस फ़र्द का जो सिर्फ़ अपनी तहज़ीब ही का नहीं इन्सानियत का भी नुमाइन्दा है। यही फ़र्द मुआशरे का बत्न है मुआशरे की रूह और मुआशरे की हस्सासियत है। नज़्मिया शायरी ने तो अपने तेवर ही बदल दिये हैं। ऐसे मौज़ूआत जो अछूते हैं अब मौज़ूदा शायरी का हिस्सा बन रहे हैं। यह रवैय्या खुश-आइन्द मुस्तकबिल का अमीन है। इनकी दिलचस्पियाँ सियासत से लेकर माबाद-उत-तबियात तक फैली हुई हैं। नज़्मों में ताबिन्दा अदबी और तहज़ीबी रिवायत की बाज़याफ़्त की कोशिश की जा रही है। फिक्र-ए-सुख़न और तख़्लीक़-ए-शेर की कैफ़ियात में तब्दीलियाँ आयी हैं। तहतुल-ग़िनाई हस्सासियत से पैदा-शुदा सोचता हुआ लम्हा, ख़ाक से रिफ़्अत-ए-समा तक को गिरिफ़्त में लेने वाला आफ़ाक़-नवर्द तख़य्युल और सुलगते हुए दिलों का आह-ए-बेकराँ, अलामती(22) और इस्तिआराती लहजे में आज की शायरी में जा-बजा मिलते हैं।

आज की उर्दू तन्क़ीद में दो चार पुराने नामों के साथ कई ऐसे नाम हैं जिनका अदबी रवैय्या यकसर बदला बदला नज़र आता है। तरक़्क़ी पसन्द तन्क़ीद, जदीदियत के अहद की तन्क़ीद और माबाद जदीदियत के बाद का यह अहद तन्क़ीद के लिए इन मानों में अहम है कि इसने तख़्लीक़ के साथ अपना रिश्ता उस्तवार रखा है। तन्क़ीद तख़्लीक़ की परख का नाम है। तन्क़ीद और तख़्लीक़ के बाहमी-रिश्ते(23) को समझते हुए इस अम्र का इल्म होता है कि अदब व तख़्लीक़ और तख़्लीक़ी-अमल, फ़िक्री और तख़्लीक़ी शुऊर व इज़्हार का नतीजा होता है। अदबी तख़्लीक़ी अमल के मुहर्रिकात का इन्हिसार इस सच्चाई पर रहता है कि लिखने वाला किस अहद में किस लिए और क्यों लिख रहा है। मैं क्यांे लिखता हूँ और क्या लिख रहा हूँ और किसके लिए लिख रहा हूँ! ऐसे ऐसे सवालात की मौजूदगी में तन्क़ीद को न तो तख़्लीक़ी अमल से और न तख़्लीक़ी अमल को तन्क़ीद से अलग किया जा सकता है। यह बात मान लेने में क़तई उज़्र नहीं होनी चाहिए कि किसी अहद के अदब से ही उस अहद की तन्क़ीद पैदा होती है और उस अदब को जाँचने के लिए वही तन्क़ीद कार-आमद(24) होती है जो मुन्सिफ़ाना और बेबाकाना इज़्ाहार आराई की बेपनाह सलाहियतें रखती हो। हर अहद के अदब को उस अहद की तन्क़ीद के हवाले से ही पहचाना जाता है और उस अहद की तन्क़ीद के रवैय्येे उस अदब की तख़्लीक़ के लिए साज़गार माहौल फ़राहम करते हैं। बीस बरसों के अर्से में तन्क़ीद में नुमायाँ उसूूल व ज़वाबित कार-फ़रमा हुए हैं और हर तबक़ा-ए-फिक्र के नाक़िदों ने अपने अपने तर्ज़े-ए-इज़हार में थोड़ी बहुत तब्दीली भी की है और नए तबक़ाती और मुआशरती हवालों की मदद् से फ़न-ए-नक़्द का एक मेयार(25) क़ायम किया है। फ़िक्शन की तन्क़ीद हो या शायरी की अब इसका लब-ओ-लहजा बदल गया है। तरक़्क़ी पसन्द नज़रियात की बातें अब भी होती हैं लेकिन उनका तेवर और रंग बदल गया है। जदीदियत के मफ़रूज़ा उसूलों की अब भी तान खींची जाती है लेकिन उनके पैराया-ए-इज़्हार में तब्दीली आ गयी है। माबाद जदीदियत के उसूल व नज़रियात या थ्योरी की बातें होती हैं लेकिन अब इतलाक़ी तन्क़ीद के हवाले से ही होती हैं। ख़ाली-खूली अदबी थ्योरी का ही ग़ल्बा तन्क़ीद पर नहीं रहता। मैं तो समझती हूँ कि तन्क़ीद का मेयार पिछले बीस बरसों में बुलन्द हुआ है और कई नए और अहम नाम सामने आए हैं। नज़रियाती बन्दिशों ने उर्दू तन्क़ीद को बहुत नुक़्सान पहुँचाया है।

आज उनसे आज़ादी की सूरतें पैदा हो गई हैं। गोपीचन्द नारंग से हक़्क़ानी-उल-क़ासिमी तक के यहाँ फ़िक्रियाती सतह पर ऐसी तब्दीलियाँ देखने को मिलती हैं जिनसे अन्दाज़ा होता है कि उर्दू तन्क़ीद में तजज़ियाती मुताले के लिए नए रवैय्ये सामने आए हैं। मैं तहसीन-ए-बाहमी को तन्क़ीद का दर्जा नहीं देती आजकल यह भी कुछ ज़्यादा हो रहा है जिससे उर्दू तन्क़ीद को नुक़्सान पहुँच रहा है अगर नाक़दीन अपने रवैय्यों में थोड़ी तब्दीली पैदा कर लें तो तन्क़ीद का मेयार और भी बुलन्द हो जायेगा।

सारांश

संक्षेप में यहाँ यह बताना मक़सूद है कि उर्दू अदब में नए रवैय्ये अपने तारीख़ी शुऊर, इन्सानी तजरिबे, मुआशरती हक़ाएक़, आलमी मसाइल, मौजूआती रंगा-रंगी के साथ ऐसे दौर में मौजूद हैं जिनसे मुस्तकबिल में काफ़ी उम्मीदें वाबस्ता हैं।

सन्दर्भ

1. नमू पज़ीरः रूप लेना
2. ज़माना-ए-गुज़श्ताः गुजरा हुआ जमाना
3. अदबी मैलानातः साहित्यिक प्रवृत्ति या रूचि
4. नौइय्यतः प्रकार
5. मुस्बतः सकारात्मक
6. मनफीः नकारात्मक
7. तख्लीकीः रचनात्मक
8. बाजगश्तः आवृत्ति
9. मुनाफकतः दिल में कुछ होना और ज़बान पर कुछ
10. मक़ासिदः इरादे
11. ईजादातः अविष्कार
12. वसीलाः साधन
13. पस-मांदाः पिछड़ा, वंचित
14. मज़म्मतः निंदा, बुराई
15. मख़्फ़ीः छिपा हुआ
16. फ़रामोशः याद से उतरा हुआ
17. मुरव्वजाः जिसका रिवाज या चलन हो
18. मुख़्तलिफ़ः अलग अलग
19. गामज़नः तेजी से चलना
20. डिक्शनः शब्द योनजा
21. अहदः ज़माना
22. अलामतीः सांकेतिक

23. बाहमी-रिश्तेः आपसी सम्बन्ध
24. कार-आमदः लाभकारी
25. मेयारः कसौटी